साप्ताहिक
Live not just breaTHE

MPHIN/2015/63220
MP/IDC1528/16-18

दि कार्मिक पोस्ट

Global School Of Excellence, Obedullaganj

वर्ष : 7, अंक : 16 (प्रति बुधवार), इन्दौर ,8 दिसंबर से 14 दिसंबर 2021 पेज : 8 कीमत : 3 रुपये

जलवायु परिवर्तन के कारण बढ़ रही है भीषण बारिश और चक्रवातों की संख्या, सरकार का जवाब....

मुंबई। पिछले कुछ वर्षों में चक्रवातों की संख्या और भारी एवं भीषण बारिश की घटनाओं में वृद्धि हुई है, जिसके लिए कहीं हद तक तापमान में हो रही वृद्धि जिम्मेवार है। यह जानकारी विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी तथा पृथ्वी विज्ञान राज्य मंत्री जितेंद्र सिंह द्वारा राज्य सभा में पूछे गए एक प्रश्न के जवाब में सामने आई है।

यही नहीं वर्ष 1891 से 2020 के बीच उत्तरी हिन्द महासागर में चक्रवात सम्बन्धी आंकड़ों के विश्लेषण से पता चला है कि हाल के कुछ वर्षों में अरब सागर में आने वाले भीषण चक्रवाती तूफानों की आवृति में वृद्धि हुई है। साथ ही बंगाल की खाड़ी से जुड़े तटीय क्षेत्र भी अत्यधिक भीषण चक्रवात के प्रति संवेदनशील बने हुए हैं। हालांकि उन क्षेत्रों में अत्यधिक भीषण चक्रवाती तूफानों की आवृति में कोई महत्वपूर्ण रुझान दर्ज नहीं किया गया है। दूसरी तरफ अरब सागर में चक्रवाती तूफानों की बढ़ती आवृति ने पश्चिमी तटों पर खतरे में तुलनात्मक रूप से वृद्धि नहीं की है, क्योंकि अरब सागर के ऊपर बनने वाले अधिकांश चक्रवात ओमान और यमन के तटों को निशाना बना रहे हैं, जिसके चलते गुजरात और महाराष्ट्र के तटवर्ती इलाकों पर भी खतरा बना हुआ है। बंगाल की खाड़ी और अरब सागर में बनने वाले औसतन हर पांच में से तीन-चार चक्रवात तटों से टकराते हैं जिनसे जान-माल की हानि होती है। इन चक्रवातों का सबसे ज्यादा खतरा ओडिशा, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु, पुडुचेरी और पश्चिम बंगाल के निचले तटवर्ती इलाकों पर ज्यादा रहता है। पृथ्वी विज्ञान राज्य मंत्री ने यह भी जानकारी दी है कि देश में प्रारंभिक चेतावनी प्रणाली में आते सुधार और आपदाओं के बेहतर प्रबंधन और उपायों के चलते चक्रवातों के कारण होने वाली मौतों की संख्या में काफी कमी आई है। हालांकि इसके बावजूद यह तूफान बुनियादी संरचनाओं और लोगों की सम्पत्ति को अभी भी भारी नुकसान पहुंचा रहे हैं। चक्रवाती तूफानों पर हाल ही में किए एक शोध से पता चला है कि आने वाले कुछ दशकों में जिस तरह से आबादी और वैश्विक तापमान में वृद्धि हो रही है उसके चलते पहले की तुलना में कहीं ज्यादा लोगों को उष्णकटिबंधीय चक्रवातों का सामना करना पड़ सकता है। शोध से पता चला है कि यदि वैश्विक तापमान में एक डिग्री सेल्सियस की वृद्धि होती है, तो इन तूफानों का सामना करने वालों की संख्या पहले की तुलना में करीब 26 फीसदी बढ़ जाएगी।

वहीं दूसरी ओर विश्व मौसम विज्ञान संगठन (डब्लूएमओ) द्वारा जारी नई रिपोर्ट स्टेट ऑफ द क्लाइमेट इन एशिया 2020 से पता चला है कि 2020 के दौरान भारत में जो जलवायु से जुड़ी आपदाएं आई थी, उनसे देश को 6.5 लाख करोड़ रुपए से ज्यादा का नुकसान उठाना पड़ा था। डब्लूएमओ द्वारा जारी एक अन्य रिपोर्ट के हवाले से पता चला है कि पिछले 50 वर्षों के दौरान देश ने मौसम और जलवायु से जुड़ी 551आपदाओं का सामना किया है इन आपदाओं में कुल 134,037 लोगों की जान गई है। गौरतलब है कि 1971, 1977 और 1991 में आए तूफान में 10 हजार लोगों की जान गई थी। 1977 में आए तूफान में तो 14,204 लोगों की जान गई थी। वहीं यदि उष्णकटिबंधीय चक्रवात को देखें तो इस अवधि के दौरान भारत में दुनिया के कुल 6 फीसदी उष्णकटिबंधीय चक्रवात आए थे, जिनमें 46,784 लोगों की जान गई है।

इसके साथ ही लू के प्रकोप के बारे में जानकारी साझा करते हुए राज्य मंत्री जितेंद्र सिंह ने बताया है कि आईएमडी ने देश में लू के प्रकोप से निपटने के लिए स्थानीय स्वास्थ्य विभागों के साथ मिलकर देश के कई हिस्सों में लू के बारे में चेतावनी देने और उनसे निपटने के लिए हीट एक्शन प्लान शुरु किया था, जोकि 2013 से लागू है।

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा लू पर किए एक शोध से पता चला है कि पिछले 50 वर्षों में देश का उत्तर-पश्चिम, मध्य और दक्षिण-मध्य क्षेत्र लू के नए हॉटस्पॉट में बदल चुका है। जहां रहने वाली एक बड़ी आबादी पर स्वास्थ्य संकट मंडरा रहा है। शोध के मुताबिक इस दौरान लू की आवृत्ति, तीव्रता और अवधि में इजाफा हुआ है, जिसकी वजह से स्वास्थ्य कृषि, अर्थव्यवस्था और बुनियादी ढांचे पर गंभीर प्रभाव पड़ रहा है। वहीं हाल ही में द लैंसेट प्लैनेटरी हेल्थ जर्नल में प्रकाशित एक अन्य शोध के हवाले से पता चला है कि देश में भीषण गर्मी के चलते हर साल औसतन 83,700 लोगों की जान जा रही है। यही नहीं अनुमान है कि जैसे-जैसे वैश्विक तापमान में वृद्धि हो रही है, उसके चलते गर्मी के कारण होने वाली मौतों में भी वृद्धि हो सकती है, जो स्पष्ट तौर पर यह दर्शाता है कि जलवायु परिवर्तन के कारण भविष्य में स्थिति और खराब हो सकती है।

व्यायाम से मस्तिष्क को मिलने वाले फायदे को कम कर सकता है वायु प्रदूषण

नई दिल्ली। अधिक प्रदूषण वाले इलाकों में व्यायाम करने से फेफड़ों में कणों का जमाव हो सकता है तथा मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ सकता है। एक नए अध्ययन में इस बात की जांच की गई कि अधिक वायु प्रदूषण में शारीरिक गतिविधि से मस्तिष्क में किस तरह का प्रभाव पड़ता है।

अध्ययन से पता चलता है कि अधिक वायु प्रदूषण वाले इलाकों में शारीरिक गतिविधियां करने से इसका अधिक फायदा नहीं होता है। शारीरिक गतिविधियां जैसे जॉगिंग, खेलना आदि व्यायाम से मस्तिष्क को किसी तरह का कोई लाभ नहीं पहुंचता। अध्ययन में जिन चीजों की जांच की गई, उनमें तंत्रिका तंतु की अति-तीव्रताएं शामिल थीं, जो मस्तिष्क के तंत्रिका तंतु और दिमाग में चोट के बारे में बताती हैं। एरिज़ोना विश्वविद्यालय के अध्ययनकर्ता मेलिसा फर्लोंग ने कहा कि भारी व्यायाम करने से वायु प्रदूषण के संपर्क में वृद्धि हो सकती है। पूर्व अध्ययनों ने मस्तिष्क पर वायु प्रदूषण के प्रतिकूलप्रभाव भी दिखाए हैं। उन्होंने बताया कि हमने यह भी देखा कि जहां वायु प्रदूषण कम होता है वहां शारीरिक गतिविधि से मस्तिष्क को लाभ होता है। इसका मतलब यह नहीं है कि लोगों को व्यायाम नहीं करना चाहिए। कुल मिलाकर, मस्तिष्क पर वायु प्रदूषण का प्रभाव मामूली पाया गया। यह उम्र बढ़ने के एक वर्ष के प्रभाव के लगभग आधे के बराबर है, जबकि मस्तिष्क पर तेज व्यायाम के प्रभाव बहुत अधिक थे, ये प्रभाव लगभग तीन साल छोटे होने के बराबर हैं। अध्ययन में यूके बायोबैंक के एक बड़े बायोमेडिकल डेटाबेस, जिनमें 56 वर्ष की औसत आयु वाले 8,600 लोगों को शामिल किया गया। लोगों को नाइट्रोजन डाइऑक्साइड और पार्टिकुलेट मैटर सहित प्रदूषण के सम्पर्क में आने से खतरा हो सकता है। इनका अनुमान भूमि उपयोग से होने वाले वायु प्रदूषण, यातायात, कृषि और वायु प्रदूषण के औद्योगिक स्रोतों के आधार पर एक मॉडल तैयार किया गया। प्रतिभागियों के वायु प्रदूषण के जोखिम को चार समान समूहों में बांटा गया था, इसमें वायु प्रदूषण के सबसे कम स्तर से लेकर अधिकतम स्तर तक शामिल था। प्रत्येक व्यक्ति की शारीरिक गतिविधि को एक सप्ताह के लिए एक गति-पहचान उपकरण के साथ मापा जाता था जिसे उन्होंने एक्सेलेरोमीटर कहा था। फिर शोधकर्ताओं ने उनके शारीरिक गतिविधि पैटर्न को इस पर निर्भर किया कि उन्हें कितनी तेजी से शारीरिक गतिविधि करने को मिली, जो कि प्रति सप्ताह 30 मिनट या उससे अधिक नहीं थी।

ओजोन प्रदूषण को बढ़ा रहा है जंगल की आग से निकलने वाला धुआं- अध्ययन

मुंबई। जंगल की आग से वातावरण में बड़ी मात्रा में प्रतिक्रियाशील कणों का उत्सर्जन होता है। जिसमें शुरुआती प्रदूषकों के साथ साथ ओजोन और पार्टिकुलेट मैटर या महीन कण भी शामिल होते हैं। यह सभी मिलकर हवा को किस तरह प्रदूषित करते हैं?

अब वैज्ञानिकों ने जंगल की आग के धुएं द्वारा हवा की गुणवत्ता किस तरह प्रभावित होती है इस पर बेहतर समझ बनाने के लिए महीनों तक अध्ययन किया। अध्ययन के लिए उन्होंने एक जेट से एकत्र किए गए आंकड़ों का उपयोग किया। वैज्ञानिकों को प्रदूषक ओजोन के उत्पादन का अनुमान लगाने के लिए एक तरीका मिला। यह प्रदूषण जमीनी स्तर पर, सांस लेने में दिक्कत पैदा कर सकता है और पारिस्थितिक तंत्र को भी नुकसान पहुंचा सकता है। इसके अलावा, टीम ने पाया कि शहरी प्रदूषण के साथ जंगल की आग के धुएं को मिलाकर ओजोन का उत्पादन होता है, जिसका अर्थ है कि शहरों के ऊपर की ओर जंगल की आग से वायु गुणवत्ता की समस्याए बढ़ सकती हैं। प्रोफेसर पॉल ओ. वेनबर्ग कहते हैं कि बेशक यह सर्वविदित है कि जंगल की आग हवा की गुणवत्ता पर असर डालती है। लेकिन रासायनिक और भौतिक तंत्र को समझना महत्वपूर्ण है जिसके द्वारा वे ऐसा करते हैं ताकि हम अधिक प्रभावी ढंग से अनुमान लगा सकें कि लगने वाली हर आग कैसे लोगों को प्रभावित करेगी। पॉल ओ. वेनबर्ग, आर. स्टैंटन एवरी वायुमंडलीय रसायन विज्ञान और पर्यावरण विज्ञान और इंजीनियरिंग के प्रोफेसर हैं। अध्ययन नासा, नोवा फॉरेक्स-एक्यू परियोजना के माध्यम से एकत्र किए गए आंकड़ों पर आधारित है। जिसमें एक डीसी-8 की सवारी करते हुए जिसे एक उड़ान प्रयोगशाला में बदल दिया गया था। वैज्ञानिकों ने धुएं के ऊपर से उड़ान भरी और विमान पर लगे उपकरणों से जानकारी एकत्र की। पेलोड में शामिल कैल्टेक के दो उपकरण थे, जो रसायन विज्ञान स्नातक छात्रों क्रिस्टल वास्केज़ और हन्ना एलन, स्टाफ वैज्ञानिक जॉन क्राउंस और प्रमुख अध्ययनकर्ता लू जू द्वारा संचालित किए गए थे। जू कहते हैं कि धुएं का अध्ययन करना कठिन है । मिश्रण आमतौर पर रिमोट सेंसिंग द्वारा उपलब्ध रिज़ॉल्यूशन की तुलना में बहुत छोटे पैमाने पर विकसित होते हैं। इसके अलावा, दृश्यता की कमी और हवाई यातायात नियंत्रण के साथ चुनौतियों को देखते हुए विमान से भी नमूना लेना मुश्किल है। फॉरेक्स-एक्यू ने इन बाधाओं में से अधिकांश को एक बहुत अच्छी तरह से उपकरण वाले विमान के साथ उड़ान योजना के साथ पार किया जो स्थानीय हवाई यातायात नियंत्रण और आग से मुकाबला करने वाले घटना नियंत्रण अधिकारियों के साथ अत्यधिक समन्वयित था। फॉरेक्स-एक्यू परियोजना ने जंगल की आग में विकसित हो रहे केमिकल के बारे में अभूतपूर्व विस्तृत जानकारी एकत्र की। इसमें प्रमुख अवलोकन शामिल थे जो इन जंगल की आग में ओजोन पैदा करने वाले केमिकल की व्याख्या करते हैं। इस विश्लेषण के निष्कर्ष शोधकर्ताओं को यह समझने में मदद करते हैं कि जंगल की आग में व्यापक रूप से अलग-अलग केमिकल क्यों होते हैं? आग के नीचे की ओर, ओजोन उत्पादन तेजी से होता है, लेकिन इसके गठन की दर धीमी हो जाती है क्योंकि जंगल की आग परिवेशी वायु के साथ घुल जाती है। प्रारंभ में, जंगल की आग को एक केमिकल, नाइट्रस एसिड (एचओएनओ, जिसे एचएनओ2 के रूप में भी जाना जाता है) जो एक बार वातावरण में उत्सर्जित होने के बाद, सूर्य के प्रकाश द्वारा हाइड्रॉक्सिल रेडिकल (ओएच) और नाइट्रिक ऑक्साइड (एनओ) में परिवर्तित हो जाता है। दोनों प्रमुख तत्व वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों (वीओसी, जो लकड़ी और मिट्टी दोनों के अंधाधुंध जलने के बाद के उत्पाद हैं) से ओजोन का निर्माण होता है। जू, वेनबर्ग और उनके सहयोगियों ने तब आंकड़ों पर गौर किया और दिखाया कि ओजोन के उत्पादन का अनुमान आग से निकलने वाले एचओएनओ की मात्रा, वीओसी की मात्रा और एनओ की मात्रा के रूप में की जा सकती है। जैसे ही जंगल की आग एनओ और एचओएनओ से बाहर निकलता है, केमिकल में एक ठहराव पर आ जाता है, लेकिन महत्वपूर्ण रूप से ओजोन गठन के लिए ईंधन वीओसी अधिक रहती है। जैसे, जब ये जंगल की आग नाइट्रिक ऑक्साइड से भरपूर शहरी वातावरण में मिल जाते हैं, जो जीवाश्म ईंधन के जलने से उत्पन्न होता है, उदाहरण के लिए, कारों और ट्रकों से ओजोन का निर्माण शुरू हो जाएगा, जो फिर से शहर की वायु गुणवत्ता को प्रभावित करेगा। जू कहते हैं कि आग के मौसम के दौरान पूरे पश्चिमी अमेरिका में जंगल की आग क्षेत्रीय ओजोन को बढ़ाती है। जंगल की आग की प्रासंगिक प्रकृति के परिणामस्वरूप जंगल की आग के करीब के क्षेत्रों पर अधिक गंभीर प्रभाव पड़ सकते हैं, जैसा कि हम पश्चिमी अमेरिका में अक्सर पिछले कुछ वर्षों में अनुभव बताते हैं। यह अध्ययन साइंस एडवांस नामक पत्रिका में प्रकाशित हुआ है।

ग्लास्गो समझौते से दुनिया को क्या मिला

कॉप-26 के उत्तरार्द्ध में जब लगभग 200 देशों के प्रतिनिधियों ने ग्लास्गो समझौते पर हस्ताक्षर किये, तो कांफ्रेंस आफ द पार्टीज (कॉप-26) के अध्यक्ष आलोक शर्मा को अपनी आंखों में भर आये आंसुओं को रोकने के लिए संघर्ष करना पड़ा। समझौते के आखिरी चरण में भारत के केंद्रीय पर्यावरण मंत्री भूपेन्द्र यादव द्वारा हस्तक्षेप करते हुए कोयले के इस्तेमाल को लेकर समझौते में ÷धीरे-धीरे खत्म करने÷ की जगह धीरे-धीरे कम करने÷ के इस्तेमाल पर जोर देने पर उनकी प्रतिक्रिया वार्ता के बेपटरी होने जैसी थी।

कई देशों की तरफ से इस पर निराशा व्यक्त करने के बावजूद भारत की ओर से प्रस्तावित बदलावों को समझौते में जगह दी गई। इस पर प्रतिक्रिया देते हुए शर्मा ने कहा, ÷मैं माफी चाहता हूं।÷ इसके बाद बदलावों को स्वीकार करने की वजह को रेखांकित करते हुए कहा कि समझौते की परिणति के लिए ये संशोधन जरूरी था। इस तरह 31 अक्टूबर से 12 नवंबर तक चलने वाला ये सम्मेलन एक दिन और चला और आखिर में समझौता हुआ। 13 नवम्बर की सुबह जारी हुआ ग्लास्गो समझौता, इसका तीसरा ड्राफ्ट था, लेकिन पहले के दो ड्राफ्ट से बहुत अलग नहीं था। एक दिन तक चले विमर्श के बाद ÷समझौता÷ और ÷संतुलन÷ के नाम पर एक के बाद एक देश समझौते पर राजी होते गये। कोस्टारिका ने इस मौके पर कहा, ÷ड्राफ्ट भले ही आदर्श न हो, लेकिन व्यावहारिक है। ये समझौता त्रुटिरहित नहीं है, लेकिन हम इस पर साथ काम कर सकते हैं।अन्य देशों ने भी यही भावनाएं व्यक्त कीं।

कॉप-26 में दुनिया ने जलवायु इमरजेंसी को स्वीकार किया। ग्लास्गो जलवायु समझौते में 2015 के पेरिस समझौते की तरह ही साल 2030 तक वैश्विक तापमान को 1.5 डिग्री सेल्सियस तक सीमित रखने पर सहमति जताई गई। और ये भी स्वीकार किया गया कि वैश्विक तापमान को 1.5 डिग्री सेल्सियस पर सीमित रखने के लिए ग्रीनहाउस गैस के उत्सर्जन में तेजी से और निरंतर कटौती करनी होगी। साथ ही कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन में साल 2030 तक 45 प्रतिशत की कमी लानी होगी और आधी सदी तक नेट जीरो करना होगा और साथ ही साथ अन्य ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में भी कमी लानी होगी। दुनिया के पास इस लक्ष्य पर पहुंचने के लिए महज 98 महीने बचे हैं। एक गैर सरकारी संस्था क्लाइमेट एक्शन ट्रैकर के मुताबिक, उत्सर्जन कम करने का जो लक्ष्य देशों ने रखा है, उससे तापमान 2.4 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ सकता है। अन्य वैज्ञानिक विश्लेषणों में भी विध्वंसक स्थिति का अनुमान लगाया गया है। वनों की कटाई, मीथेन उत्सर्जन में कमी एवं कृषि पर हुई कुछ महत्वपूर्ण डीलों को यदि छोड़ दें तो कॉप-26 में कुछ खास नहीं हुआ। यूएनएफसीसीसी के कॉप-26 के दौरान कई देशों ने साथ आकर अपनी उत्सर्जन गतिविधियों में कटौती करने का प्रण किया। इनमें वृक्षों की कटाई से लेकर मीथेन उत्सर्जन में कटौती जैसी बातें शामिल हैं। कृषि और वैश्विक बाढ़ों पर भी विचार-विमर्श हुआ। लेकिन ये सारे प्रण गैर बाध्यकारी और स्वैच्छिक हैं। हालांकि अपने इरादों की घोषणा और उसे राजनैतिक समर्थन देना आज मायने रखता है क्योंकि हमारी धरती लगातार गर्म हो रही है। कॉप-26 में वन, व्यापार एवं परिवहन की तरह कृषि के लिए एक खास दिन नहीं था और इसे ÷प्रकृति दिवस÷ के एक भाग के रूप देखा गया। कृषि, वन एवं भूमि कुल मीथेन उत्सर्जन के एक चौथाई हिस्से के लिए ज़िम्मेदार हैं। प्रकृति दिवस÷ के अवसर पर 45 देशों ने पालिसी एक्शन एजेंडा पर सहमति व्यक्त की। इनमें स्विटजरलैंड, नाइजीरिया, स्पेन एवं यूएई शामिल हैं और ये देश कुल हरित गृह उत्सर्जन के 10 प्रतिशत हिस्से के लिए जिम्मेदार हैं। यूके की सरकार ने कहा कि ये देश कृषि के नए एवं संवहनीय तरीकों का इस्तेमाल और उनमें निवेश के लिए कटिबद्ध हैं। कुल 26 देशों ने अपनी कृषि नीतियों में परिवर्तन लाने और उत्पादन को संवहनीय बनाने एवं प्रदूषण में कटौती का प्रण लिया है। इसके अलावा कृषि क्षेत्र में 4 बिलियन डॉलर का निवेश करने की बात भी कही गई है। कॉप-26 के अध्यक्ष आलोक शर्मा ने कहा कि पेरिस समझौते को पूरा करने के लिए प्रकृति एवं भूमि की भूमिका को समझे जाने की आवश्यकता है। इससे जलवायु परिवर्तन के साथ-साथ जैव विविधता को भी फायदा होगा। 23 सितंबर को हुए संयुक्त राष्ट्र फुड सिस्टम्स समिट में इसकी एजेंसियों ने कृषि गतिविधियों एवं किसानों को दिए जा रहे समर्थन की समीक्षा की मांग की। उनका कहना है कि जिन क्षेत्रों में किसानों को सर्वाधिक समर्थन मिलता है, वे उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार होने के साथ-साथ पर्यावरण के लिए भी नुकसानदेह हैं। उदाहरण के लिए बीफ उद्योग को सर्वाधिक समर्थन प्राप्त है जबकि यह हरित ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन के लिए सर्वाधिक जिम्मेदार हैं।

प्रदूषण रोकने में कितने कारगर रहे नए बीज?

चंदीगढ़। अक्टूबर महीने के आखिरी सप्ताह में पंजाब के किसान धान की कटाई में व्यस्त थे। कुछ खेतों में धान कटाई के बाद पराली में आग लगी थी और आसमान धुएं से भरे थे। बुआई में देरी के चलते इस बार खेतों से पराली हटाने का काम 10 नवंबर तक जारी रहा। आमतौर पर 4-5 नवंबर तक गेहूं की बिजाई का काम शुरू हो जाता है।

पंजाब में धान की कटाई के बाद गेहूं की बिजाई के लिए पर्याप्त समय निकालना किसानों के लिए बड़ी चुनौती है। लिहाजा, किसानों को धान की उन किस्मों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है जिससे उन्हें 20 से 35 दिन की मोहलत मिल सके। पंजाब के मनसा जिला मुख्यालय से 9 किलोमीटर दूर सदासिंह वाला गांव के रहने वाले 32 वर्षीय गुरसिमरन तीन वर्षों से छोटी अवधि वाली नई धान किस्मों को उपजा रहे हैं। धान कटाई में व्यस्त गुरसिमरन डाउन टू अर्थ से देरी का एक और कारण बताते हैं। वह कहते हैं, ÷मैं धान में नमी खत्म होने का इतंजार कर रहा था ताकि दाना मंडी से अपने उपज की सही कीमत मिल सके। सिविल इंजीनिरियरिंग की पढ़ाई पूरी करने के बाद वर्ष 2014 से ही गुरसिमरन अपनी पुश्तैनी 25 एकड़ की खेती को संभाल रहे हैं। इस बार वह काफी खुश हैं और कहते हैं कि तीन साल बाद कुल 123 दिन (नर्सरी के 30 दिन को मिलाकर) में तैयार होने वाली पीआर 126 किस्म की बेहतर उपज मिली है और लंबी अवधि वाली पूसा 44 और पीली पूसा की तुलना में इसकी पराली भी कम निकली है। अमृतसर के चिब्बा गांव के गुरबचन सिंह पराली को लेकर अपना अनुभव साझा करते हैं, ÷पराली का कम-ज्यादा होना धान प्लांट की ऊंचाई पर निर्भर करता है। पूसा 44 किस्म की ऊंचाई 3.5 फीट और पीआर 126 की ऊंचाई करीब 2.5 फुट व पीआर 128 की ऊंचाई 3 फीट के आसपास होती है। लुधियाना स्थित पंजाब एग्रीकल्चर यूनिवर्सिटी (पीएयू) के प्रधान राइस ब्रीडर और डिपार्टमेंट ऑफ प्लांट ब्रीडिंग एंड जेनेटिक्स से संबद्ध जीएस मांगट बताते हैं कि नई किस्में बौनी, ज्यादा पैदावार वाली और ज्यादा बीमारियों से लड़ने की क्षमता रखती हैं। इन खास किस्म वाली बीजों से पराली में आग लगाने की घटनाओं का हल संभव है क्योंकि यह किसानों को धान की कटाई के बाद दूसरी फसल के लिए एक लार्जर विंडो (पर्याप्त समय) देती हैं। हालांकि ग्राउंड पर इनमें से कई दावे किसानों के अनुभवों से मेल नहीं खाते हैं। किसान गुरसिमरन बताते हैं कि जब वह इंजीनियरिंग की पढ़ाई के बाद खेती के लिए लौटे तो उन्हें छोटी अवधि में तैयार होने वाली धान के किस्म की दरकार थी क्योंकि वह लंबे वक्त से चली आ रही धान-गेहूं के फसली चक्र के बीच तीसरी फसल भी पैदा करना चाहते थे। इसलिए सितंबर, 2018 में उन्होंने पीएयू में किसान मेला में छोटी अवधि में तैयार होने वाली वाली किस्म पीआर 126 का अनुभव लिया। इसके बाद मार्च, 2019 में वहां से पीआर 126 का 24 किलो का पांच बीज बैग लेकर घर आए। हालांकि, 2019 और 2020 में खेतों में पूसा44 की जगह पीआर 126 लगाने पर उन्हें घाटा भी उठाना पड़ा क्योंकि पूसा 44 से प्रति एकड़ 35 कुंतल तक उपज मिलती थी जबकि पीआर 126 से दोनों वर्ष औसत उपज 25-29 कुंतल प्रति एकड़ तक रही। यानी प्रत्येक वर्ष पूसा 44 की तुलना में करीब सात कुंतल तक पैदावार कम मिली (देखें, स्पष्ट संबंध,)। पैदावार के कम होने से किसान की मेहनत बर्बाद हो जाती है और न्यूनतम समर्थन मूल्य के बावजूद उनकी लागत नहीं निकल पाती। गुरसिमरन अपना अनुभव बताते हैं कि लंबी अवधि वाली पूसा 44 से प्रति एकड़ में 20 से 24 कुंतल तक पराली निकलती है, जबकि पीआर 126 की किस्म में प्रति महज 10 कुंतल पराली निकलती है। वहीं, मध्य अवधि में तैयार होने वाली पीआर 128 में पराली की उपज प्रति एकड़ 15 कुंतल तक है (देखें, झूठी उम्मीदें)। पराली जलाने से रोकने के लिए प्रोत्साहित की जाने वाली छोटी अवधि वाली किस्म अपनाने के बावजूद गुरसिमरन पराली प्रबंधन के सवाल पर ठिठक जाते हैं और कहते हैं, ÷अभी ग्रीष्म मूंग की बुआई करनी है, ऐसे में वक्त कहां बचा है। डीजल की इस महंगाई (100 रुपए से अधिक प्रति लीटर) के वक्त में पराली तो जलानी ही पड़ेगी। केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के आंकड़ों के मुताबिक, इस बार मौसम की अनिश्चितताओं के कारण पंजाब में धान का क्षेत्र एक लाख हेक्टेयर तक घटा है। पंजाब में वर्ष 2020 में 31.48 लाख हेक्टेयर धान क्षेत्र था, इस बार यह 30.48 लाख हेक्टेयर ही रह गया। जीएस मांगट कहते हैं कि पंजाब में बासमती का क्षेत्र इस बार कम हो गया है और परमल किस्म का क्षेत्र बढ़ गया है। पीएयू के मुताबिक 2021 में एक बार फिर किसानों ने पंजाब में लंबी अवधि वाली किस्मों को ज्यादा तरजीह दी है और छोटी अवधि वाली किस्मों को कम किया है। वर्ष 2020 में पंजाब में 71.3 फीसदी परमल धान का क्षेत्र छोटी अवधि वाला था, 2021 में यह घटकर 67.7 फीसदी हो गया। इसके उलट लंबी अवधि वाला धान 2020 में 28.7 फीसदी था जो बढ़कर 32.3 फीसदी हो गई है। पंजाब में उपज और लागत निकालने के लिए किसानों का लंबी अवधि वाले धान की तरफ आकर्षण बना हुआ है। हालांकि, बीते 10 वर्षों में नई किस्मों की आमद के चलते परमल (गैर बासमती) की कुल 23 प्रचलित किस्में हैं जो अलग-अलग जिलों में लगाई जाती हैं। बहरहाल छोटी और मध्यम अवधि (140 दिन से कम में तैयार होने वाली) में तैयार होने वाली किस्मों की तरफ धीरे-धीरे कदम बढ़ा रहे किसान पैदावार कम होने की चिंताओं से घिर गए हैं। लिहाजा छोटी अवधि वाली किस्मों के कारण धान से गेहूं के बीच मिलने वाले समय का इस्तेमाल तीसरी फसल (आलू, मटर, समर मूंग) लगाकर कर रहे हैं। ऐसे में धान-गेहूं के बीच बड़ी मोहलत के बावजूद पराली में आग लगा देते हैं। पंजाब में लंबी अवधि वाली धान किस्मों को बीते तीन वर्षों से जोर-शोर से हतोत्साहित किया जा रहा है और इसका एक प्रमुख कारण पराली के बोझ को कम करना और पराली में आग लगाने की घटनाओं पर काबू पाना भी है। पराली जलाने की मजबूरी को पंजाब के माझा क्षेत्र अमृतसर और तरन तारन जिले में भी किसानों ने साझा किया। अक्टूबर के अंत में तरनतारन जिले में परसौल गांव के 64 वर्षीय किसान बलेंद्र सिंह के खेतों में भी पराली जलाई जा रही थी। उन्होंने डाउन टू अर्थ से कहा ÷आग नहीं लगाएंगे तो क्या करेंगे? धान की पराली किसी काम की नहीं है। गेहूं के अवशेष की तरह न इसका बंडल बन सकता है और न इसे बेच सकते हैं। इसे कहां रखें?÷ बलेंद्र ने अपने खेतों में परमल धान की छोटी अवधि यानी कुल 140 दिन (नर्सरी के 30 दिन शामिल) में तैयार होने वाली किस्म पीआर 121 और बासमती की पूसा 1121 किस्म लगाई थी। वह बताते हैं कि पीआर 121 पर 1960 रुपए तय न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) मिलती है लेकिन पूसा 1121 बासमती का दाम 4000 रुपए तक मिल जाता है। इस अर्थशास्त्र के लिए अमृतसर और तरनतारन में किसान परमल किस्म की जगह बासमती को तरजीह देते हैं। इन्हें मंडी में बोली लगने के दौरान आढ़तियों को भाव के आधार पर हर साल बेचा जाता है। बलेंद्र बताते हैं कि पंजाब में चावल मिलों का दबदबा है। ऐसे में ज्यादातर उनकी मांग के अनुरूप ही किसान धान के बीज का चुनाव करते हैं। अमृतसर और तरणतारन में एमएसपी पर मिलने वाली परमल की छोटी अवधि वाली पीआर (पीआर 121, पीआर 126 आदि) से ज्यादा बासमती पूसा 1509 और पूसा 1121 पर केंद्रित होते हैं। यह भी पीआर की इन छोटी अवधि के आसपास ही तैयार होती है। पूसा बासमती 1509 और 1121 कुल 125-130 दिनों में तैयार हो जाते हैं। केंद्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय की पराली जलाने के मुद्दे पर गठित समीक्षा समिति ने अपनी 1 जनवरी, 2019 को अपनी रिपोर्ट में बताया कि पंजाब में 3,600 धान मिलों का नेटवर्क है। रिपोर्ट में यह भी कहा गया कि छोटी अवधि वाली किस्मों से किसानों को तीसरी फसल या फसलों में विविधता का मौका मिल सकता है।पराली और प्राकृतिक संसाधनों के लिए समस्या मानी जा रही 160 दिन से ज्यादा समय लेने वाली लंबी अवधि की धान किस्मों (पूसा 44 और पीली पूसा, डीजी पूसा) को स्थानांतरित करने के लिए पंजाब में 2013 से लेकर अब तक परमल की छह किस्में पीएयू की ओर से जारी की जा चुकी हैं। इनमें अभी सर्वाधिक चलन में 2013 में जारी की गई पीआर 121 है जो 140 दिन में तैयार होती है, इसके बाद 2017 में रिलीज की गई पीआर 126 प्रमुख किस्म है जो कुल 123 दिन में ही तैयार होती है।

पीएयू ने 2017 में लंबी अवधि वाली पूसा 44, पीली पूसा को गैर-सिफारिशी श्रेणी में डाल दिया है और केंद्र से इस किस्म को डी-नोटिफाई करने की भी अपील की थी। इसके अलावा 2018-2019 में छह जिलोंङ्कबरनाला, लुधियाना, मनसा, मोगा, मुक्तसर और संगरूर में किसानों को मुफ्त छोटी अवधि वाले बीज भी बांटे गए। जीएस मांगट डाउन टू अर्थ से बताते हैं, ÷पुरानी लंबी अवधि में तैयार होने वाली किस्में खरीफ के धान से रबी के गेहूं तक बिजाई के बीच महज 10 दिन की मोहलत छोड़ती थी। छोटी किस्में खासतौर से पीआर 126 से किसानों को 37 दिन का और पीआर 121 में 20 दिन का समय मिल जाता है। किसान गेहूं के लिए आदर्श समय 5 नवंबर तक बिजाई कर सकते हैं। यह लंबी अवधि की तुलना में काफी बड़ी मोहलत है।÷

हालांकि, अमृतसर के अजनाला तहसील में कोटला डूम गांव के किसान बच्चितर सिंह डाउन टू अर्थ से बताते हैं, ÷उनके पास पांच एकड़ खेत है जिसमें उन्होंने छोटी अवधि वाली परमल पीआर 121 को लगाया था। यह भी नर्सरी के साथ तैयार होने में 150 दिन तक ले लेती है। फिर इसकी पराली भी प्रति एकड़ 20 से 25 कुंतल तक निकलती है। ऐसे में बहुत ज्यादा अंतर नहीं आया है।÷ वह कहते हैं कि किसानों को पराली के लिए अलग से ही मदद देनी पड़ेगी। राज्य सरकार सीमांत और छोटे किसानों को 2,500 रुपए प्रति एकड़ पराली प्रबंधन की मदद देने से मुकर गई है। मार्च 2020 के बाद से इस मद में किसी भी योग्य किसान को पैसे नहीं दिए गए।

जीएस मांगट पीएयू के जरिए विकसित पीआर 126 को ÷वंडर सीड÷ की संज्ञा देते हैं। उनका मानना है कि यह परमल धान में किसानों के लिए बहुत ही मददगार होगी। हालांकि किसान सिर्फ दुविधा में नहीं हैं बल्कि तेजी से मौसम के बदलते स्वरूप ने उन्हें झटका देना शुरू कर दिया है और वैज्ञानिक प्रयासों को भी अनुपयोगी बनाने लगा है।पीएयू के कृषि वैज्ञानिक बूटा सिंह ढिल्लों कहते हैं, ÷यदि पीआर 121, पीआर 124, पीआर किस्म की रोपाई 15 जून से 25 जून कर दें और पीआर 126 की रोपाई 15 जून के बजाए 5 जुलाई को कर दें तो पैदावार में में फर्क नहीं पड़ेगा।÷ वह बताते हैं कि इससे न सिर्फ पराली का बोझ कम होगा बल्कि गेहूं की बिजाई के लिए भी ज्यादा समय मिलेगा। पीएयू ने पंजाब में धान की बुआई के लिए सरकार को 20 जून से 25 जून करने की सिफारिश की है। इस तारीख से पहले धान रोपाई पर रोक लगने से भूजल संकट का समाधान भी हो सकता है क्योंकि जून के आखिरी में बारिश शुरू हो जाती है। हालांकि, इससे पराली की समस्या का हल नहीं निकलता।गुरुसिमरन बताते हैं कि छोटी अवधि वाली किस्मों से 20-35 दिन की मोहलत मिलने का दावा व्यावहारिक नहीं है। यदि छोटी अवधि वाली किस्मों की यदि पहले बुआई कर दी जाए तो गर्मी के कारण उपज कम हो जाती है। पिछले दो वर्षों से सितंबर महीने में ठीक-ठाक गर्मी पड़ रही है और दोनों वर्ष छोटी अवधि वाली किस्म पीआर 126 और पीआर 128 की उपज 30 कुंतल प्रति एकड़ से कम रही। ऐसे में इस बार मध्य जुलाई में पीआर 126 और पीआर 128 लगाया था जिसकी उपज 30 कुंतल प्रति एकड़ से ज्यादा आई है।

बिहार-खरीफ के बाद अब रबी की फसल खतरे में, खेतों में जमा है पानी

मोकामा। बिहार के मोकामा क्षेत्र में खेत में जमा पानी। मोकामा क्षेत्र दाल की खेती के लिए मशहूर है। फोटो- उमेश कुमार राय बिहार के मोकामा क्षेत्र में खेत में जमा पानी। मोकामा क्षेत्र दाल की खेती के लिए मशहूर है। फोटो- उमेश कुमार राय बिहार के मोकामा क्षेत्र में खेत में जमा पानी। मोकामा क्षेत्र दाल की खेती के लिए मशहूर है। मैंने खरीफ सीजन में दो बीघे में धान की खेती की थी। जब धान को काटने की बारी आई, तो बारिश और आंधी ने फसल बर्बाद कर दी। एक किलो धान भी खेत से नहीं निकल सकाउम्मीद थी कि गेहूं की फसल लग जाएगी, लेकिन खेत में अब तक पानी लगा हुआ है। मुझे नहीं लगता कि इस सीजन में कोई फसल लगा पाऊंगा, उन्होंने कहा।

महम्मदपुर पंचायत में वे अकेले नहीं हैं, जो जलजमाव के कारण फसल नहीं लगा पा रहे हैं। अनिल कुमार ने बताया कि पंचायत क्षेत्र के 50 प्रतिशत खेतों में जलजमाव के कारण अब तक बुआई शुरू नहीं हो पाई है। पानापुर ब्लॉक की बकवा पंचायत में भी करीब 50 प्रतिशत खेतों में अब तक बुआई शुरू नहीं हुई है। पंचायत के स्थानीय निवासी विजेंद्र सिंह कहते हैं, +ऐसा पहली बार हुआ है कि बाढ़ खत्म हो जाने के बाद बारिश हुई और खेतों में जलजमाव हो गया। बाढ़ का पानी रुकता तो था, लेकिन रबी की बुआई तक पानी निकल जाता था। इस बार पानी अब भी खेतों में है।+ उन्होंने बताया कि उनकी पंचायत में मुख्य रूप से गेहूं और गन्ने की खेती की जाती है। समस्तीपुर के किसान ओम प्रकाश यादव चार बीघा खेत में अब तक गेहूं की बुआई नहीं कर पाये हैं क्योंकि खेत में पानी लगा हुआ है। उन्होंने कहा, +मैंने 9 बीघा में गोभी और बैगन लगाया था, लेकिन बारिश का पानी जम जाने से सब्जियां बर्बाद हो गईं। रबी सीजन में गेहूं की बुआई करना चाहता था, लेकिन जलजमाव के कारण पांच बीघे में ही बुआई कर पाये हैं। चार बीघा खेत यों ही पड़ा हुआ है। उल्लेखनीय है कि इस साल बाढ़ के कारण 6,63,776 हेक्टेयर में लगी खरीफ फसल को नुकसान हुआ है जबकि भारी बारिश के कारण 1,41,227 हेक्टेयर खेत में खरीफ सीजन में बुआई नहीं हो पाई थी। बुआई नहीं कर पाने वाले किसानों के लिए पहली बार बिहार सरकार ने मुआवजे की घोषणा की थी और इसके लिए 96 करोड़ रुपए आवंटित किया था।

औसत से कम हो रही बुआई- बिहार के कृषि विभाग के मुताबिक, बिहार में रबी सीजन की बुआई नवम्बर के मध्य से शुरू होती है और दिसम्बर के मध्य तक खत्म हो जाती है। इस साल बिहार सरकार ने रबी सीजन के लिए 45.10 लाख हेक्टेयर में बुआई का लक्ष्य रखा है। चूंकि बिहार में रबी की मुख्य फसल गेहूं है, इसलिए गेहू का लक्ष्य सबसे ज्यादा रखा गया है। बिहार में 23 लाख हेक्टेयर में गेहूं, 5 लाख हेक्टेयर में मक्का, 12 लाख हेक्टेयर में दलहन की बुआई का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। लेकिन आंकड़े बताते हैं कि बुआई काफी धीमी चल रही है। कृषि विभाग के आंकड़ों के मुताबिक, पिछले हफ्ते बिहार में महज 2.150 लाख हेक्टेयर में ही गेहूं की बुआई हो पाई, जो पिछले साल की इसी अवधि के मुकाबले आधा है और साल 2019-2020 के मुकाबले एक तिहाई है। साल 2020-2021 में बिहार में इस अवधि में 5.250 लाख हेक्टेयर और साल 2019-2020 में 7.110 लाख हेक्टेयर में गेहूं की बुआई हुई थी। इसी तरह दलहन की बुआई में भी सुस्ती देखी जा रही है। पिछले एक हफ्ते में राज्य में दलहन की बुआई महज 1.620 लाख हेक्टेयर में हो सकी है। पिछले रबी सीजन में इसी अवधि में 2.19 लाख हेक्टेयर, रबी सीजन 2019-2020 में 2.44 लाख हेक्टेयर और रबी सीजन 2018-2019 में 2.83 लाख हेक्टेयर में दलहन की बुआई हुई थी। दाल उत्पादन के लिए मशहूर मोकामा क्षेत्र के किसान बाल्मीकि कुमार 8000 रुपए प्रति बीघा पर 100 बीघा खेत लेकर खेती करते हैं। इस बार मोकामा क्षेत्र में जलजमाव इतना लम्बा खिंच गया कि वे ज्यादातर खेतों में दाल की बुआई नहीं कर पाये। 70 बीघा खेत में बुआई करना बाकी है। हफ्ते भर पहले खेत का पानी सूख गया है, लेकिन कीचड़ अब भी है। पूरी तरह सूखने में एक हफ्ता और लग जाएगा, लेकिन तब तक बुआई का सीजन खत्म हो जाएगा। दलहन की बुआई का सबसे बढ़िया सीजन अक्टूबर होता है। बाल्मीकि कुमार कहते हैं, +30 बीघा में पानी कम हो गया था, लेकिन कीचड़ था, तो 600 रुपए प्रति बीघा मजदूरी देकर 30 बीघा खेत में जुताई किये बिना बीज डलवाया है। सिर्फ मजदूरी पर 18000 रुपए खर्च हो गये। नहीं पता कि बाकी 70 बीघा में इस बार बुआई हो पाएगी कि नहीं। उधर, मौसम विज्ञान विभाग के आंकड़ें बताते हैं कि मॉनसून सीजन के बाद 1 अक्टूबर से 9 दिसंबर 2021 के बीच बिहार में 35 जिलों में बहुत ज्यादा (सामान्य से 60 फीसदी से अधिक) बारिश हुई है। जबकि शेष तीन जिलों में ज्यादा (सामान्य से 20 से 59 फीसदी के बीच) बारिश हुई है। अगर आंकड़ों की बात करें तो इस अवधि के दौरान सामान्य तौर पर 68.2 मिलीमीटर बारिश होनी चाहिए, जबकि 189.6 मिमी बारिश हुई है, जो सामान्य से 178 प्रतिशत अधिक है। बिहार में खाद की भी घोर किल्लत है। इस वजह से भी बुआई पर असर पड़ रहा है। कृषि विभाग के अधिकारियों ने बताया कि रबी सीजन के लिए बिहार को 2 लाख 30 हजार मेट्रिक टन डीएपी, 4 लाख 35 हजार मेट्रिक टन यूरिया और 1 लाख टन एनपीके फर्टिलाइजर की जरूरत थी, लेकिन केंद्र सरकार की तरफ से डेढ़ लाख टन डीएपी, तीन लाख 27 हजार टन यूरिया और 72 हजार टन एनपीके दिया गया है। सीतामढ़ी के किसान सुधीर सिंह ने डाउन टू अर्थ को बताया, +मैं खाद के लिए सुबह से लगा हुआ था, लेकिन शाम को किसी तरह खाद मिल पाया, तो मैंने गेहूं की बुआई कर दी है, लेकिन मेरे सामने ही 200 किसान बैरंग लौट गये थे। उन्होंने कहा, +दुकानों में खाद की इतनी ज्यादा किल्लत है कि दुकानदार बचे खुचे खाद को ऊंचे दाम पर बेच रहे हैं। जो खाद 1200 रुपए बोरा मिलता था, वो अभी 1600-1700 रुपए में मिल रहा है।सीतामढ़ी के ही एक अन्य किसान संजय सिंह का कहना है कि उन्हें पांच एकड़ खेत में गेहूं बोना है, लेकिन खाद नहीं मिलने से वे बुआई नहीं कर पा रहे हैं।जिला स्तर पर खाद की सप्लाई करने वाली बिहार स्टेट कोऑपरेटिव मार्केटिंग यूनियन लिमिटेड के मैनेजिंग डायरेक्टर आरपी सिंह ने डाउन टू अर्थ को बताया, +सरकार हमें खाद आवंटित करती है और हमलोग जिलों को उनकी जरूरत के अनुसार आवंटित करते हैं। लेकिन पिछले एक महीने से खाद की किल्लत होने के चलते हम मांग के अनुरूप सप्लाई नहीं कर पा रहे हैं। खाद की किल्लत के मद्देनजर बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने गुरुवार को अधिकारियों के साथ एक बैठक की। मुख्यमंत्री ने बताया कि केंद्र सरकार के साथ बातचीत के बाद खाद की आपूर्ति बढ़ाई गई है और अधिकारियों से कहा गया है कि वे केंद्र सरकार के संपर्क में रहें ताकि खाद की आपूर्ति में दिक्कत न हो।

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक सोनल मेहता केलिए प्रतीक्षा ग्राफिक्स, 127 देवी अहिल्या मार्ग, इंदौर (म.प्र.) से मुद्रित एवं 209-बी शहनाई रेसीडेंसी-2 कनाड़िया रोड इंदौर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: डॉ. सोनल मेहता फोन : 0731-2595008 Mail.sonal12mehta@yahoo.co.in 9755040008